हिन्दी साहित्य में दलित का उदभव एवं विकास

लेखक
श्रीमती श्रद्धा कोरे पवार (शोधछात्रा)
शहीद महेन्द्र कर्मा विश्व विद्यालय
जगदलपुर छत्तीसगढ़
E-mail – aashi26880@gmail.com

सारांश :— विश्व साहित्य में भारतीय साहित्य का अपना एक विशिष्ट स्थान है। भारतीय साहित्य में भारत की सभी भाषाएँ समाहित हैं, जिनमें हिन्दी साहित्य का स्थान अग्रणी है। हिन्दी साहित्य का अपना क्षेत्र व अपनी विधाये है जिनमें से एक दलित साहित्य है। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व दलित साहित्य ने आकार ग्रहण नहीं किया था। परन्तु समय परिवर्तनशील है समय में परिवर्तन के साथ समाज का स्वरूप भी बदलने लगा। सदियों से शोषण का शिकार होने वाले वर्ग के अन्दर भी चेतना जाग्रत होने होने लगी और इस वर्ग ने समाज सुधारकों व साहित्यकारों को अपनी ओर आकर्षित किया और इस तरह दलित साहित्य ने अपना स्वरूप गढ़ना आरम्भ किया। 'डॉ. दयानंद बटोही' के अनुसार दलित साहित्य दलितों की चेतना को अभिव्यक्ति देता है। इसमें दलित मानवता का स्वर है। एक नकार है। एक विद्रोह है। यह विद्रोह उस व्यवस्था के प्रति है जो सदियों से दलितों का शोषण कर लाभ की स्थिति में है।

बीज शब्द : डॉ. दयानंद बटोही, दलित साहित्य, अनार्य, शोषण, धार्मिक, रैदास.

प्रस्तावना :- विश्व साहित्य में भारतीय साहित्य का अपना एक विशिष्ट स्थान है। भारतीय साहित्य में भारत की सभी भाषाएँ समाहित हैं, जिनमें हिन्दी साहित्य का स्थान अग्रणी है। हिन्दी साहित्य का अपना क्षेत्र व अपनी विधाये है जिनमें से एक दलित साहित्य है। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व दलित साहित्य ने आकार ग्रहण नहीं किया था। परन्तु समय परिवर्तनशील है समय में परिवर्तन के साथ समाज का स्वरूप भी बदलने लगा। सदियों से शोषण का शिकार होने वाले वर्ग के अन्दर भी चेतना जाग्रत होने होने लगी और इस वर्ग ने समाज सुधारकों व साहित्यकारों को अपनी ओर आकर्षित किया और इस तरह दलित साहित्य ने अपना स्वरूप गढ़ना आरम्भ किया। 'डॉ. दयानंद बटोही' के अनुसार दलित साहित्य दलितों की चेतना को अभिव्यक्ति देता है। इसमें दलित मानवता का स्वर है। एक नकार है। एक विद्रोह है। यह विद्रोह उस व्यवस्था के प्रति है जो सदियों से दलितों का शोषण कर लाभ की स्थिति में है।

शोध विस्तार :- आदिम युग में मनुष्य जाति शब्द से अपरिचित था, उसकी मूल आवश्यकता मात्र भोजन थी जिसकी तलाश में उसने परिश्रम करना सीखा। धीरे-धीरे विकास होता गया और युग बनते गये। वैदिक युग में "घुमक्कड़ आर्यों और अनार्यों के बीच भयानक संघर्ष हुआ। आर्यों की आँखे दुश्मनों की सम्पत्ति पर लगी हुई थी। उन्हें हड़पने के लिए उनमें निरन्तर संघर्ष होते रहे। दस्युओं के पास स्वर्ण, हीरा, जवाहरात भी थे, जिनके चलते आर्यों का मन चल गया। दस्युओं के रहन-सहन से भी आर्य उनके विरोधी हो गये।"[1] आर्यों से अनार्य अर्थात् भारत के मूल निवासी पराजित हो गये और आर्यों ने इन्हें अपना गुलामबना लिया और इनसे गंदे अशोभनीय व अनैतिक कार्य करवाने लगे ये कार्य इनकी पहचान बनते गये और जातिबोधक हो गये। "उत्तर वैदिक काल में जब वर्णव्यवस्था की रचना हुई तो इन दस्यु और अनार्य अथवा द्रविड़ जातियों को आर्यों ने 'शूद्र' के अन्तर्गत डाल दिया ।"[2] "वैदिक तथा उत्तर वैदिक काल में भारतीय समाज में होने वाले विषमतापूर्ण व्यवहार की प्रतिक्रिया स्वरूप जैनमत, बुद्धमत तथा धार्मिक सामाजिक आंदोलनों का निर्माण हुआ ।"[3]

हिन्दी साहित्य की प्रारम्भिक अवस्था में दलित साहित्य नाम की कोई विधा नहीं थी । शौर्य और श्रृंगार वर्णन से हिन्दी साहित्य की यात्रा विकसित हुई है। चारण भाट अपने राजाओं के दरबार में तुकबंदी, पहेली, कविता कहकर बक्शीस पाते थे। दरबारी कवि अपने आकाओं का युद्ध वर्णन, प्रशस्तिगान करते थे। नायिकाओं का नख-शिख वर्णन कर साहित्यिक रसधारा बहाते थे। राजपूतों के शासन काल में हिन्दी साहित्य का जन्म हुआ है। उस समय भी समाज में बहुसंख्यक दलित थे। जिनके शोषण पर राजाओं का शासन था। राजतंत्रीय परिवेश में शोर्य और श्रृंगार के सिवाय दलित चेतना की न कोई गुंजाइस थी न गरिमा समाज में दलित बेसुमार थे किन्तु साहित्य में दलितों की भावना नगण्य थी। इस काल को हिन्दी काल का'आदिकाल' कहा जाता है। हिन्दी साहित्य का आदिकाल दलित साहित्य का शून्यकाल है। बौद्ध साहित्य का जन्म भी ब्राहमणवाद के विरोध में ही हुआ है, इसी तरह सिद्ध साहित्य की परम्परा 7 वीं शताब्दी से लेकर 13वीं शताब्दी तक मानी जाती है। जिसमें चौरासी सिद्ध कवि में से 30 से 35 कवि शूद्र थे। सिद्धों और नाथों की वाणी का अध्ययन करने के उपरान्त डॉ.प्रेमशंकर जी का कथन है कि "नाथ सिद्ध कवियों में कई शूद्र नाथ सिद्ध कवि थे। इन्होंने जाति व्यवस्था, ब्राहमणवादी संस्कृति और साहित्य के विरोध में सशक्त अभिव्यक्ति के द्वारा अपने संघर्ष को जीवन्त रखा।" मध्यकाल में संत 'रैदास' हिन्दी दलित साहित्य के प्रथम दलित चेतना सम्पन्न कवि है, जिन्होंने स्वयं वर्ण व्यवस्था के लिए विष का पान किया है। मध्यकाल में निर्गुण शाखा के अनेक ऐसे कवि (रैदास, पलटू, दादू आदि ने) हुये जिन्होंने अपनी सबल अभिव्यक्ति के द्वारा अपने संघर्ष एवं काव्य में अपने व्यवसाय तथा जाति की स्थिति को बेझिझक प्रस्तुत कर सांस्कृतिक एवं साहित्यक क्रांति को जीवन्त रखा। इस पर माताप्रसाद जी लिखते है कि "सन्तों के विचारों में दलित जाति को प्रेरणा मिली उनमें आत्मविश्वास जाग्रत हुआ।"[4] रैदास जी ने वर्ण व्यवस्था पर प्रहार करते हुए कहते है कि-

"रैदास एक ही बूंन्द सौ, सब की भयों वित्यार
मुरिख है जो करत है, वरन, अवरन विचार"

हिन्दी दलित साहित्य का उद्भव आज से पाँच सौ साल पहले हो चुका था जिसका प्रमाण हमे कबीरदास जी के दोहों से मिलता है। कबीर दास जी ने भारतीय संस्कृति की घसीपीटी परम्परा का तिरस्कार किया। वे भारतीय समाज की उन जड़ पहलूओं को जो मनुष्य को मनुष्य के अधिकारों से वंचित करते है के विद्रोही थे।

"अरे इन दोउ, राह न पाई
हिन्दुवन की हिन्दुवाई देखी, तुरकन की तुरकाई"

दलित साहित्य का प्रारम्भ हिन्दी साहित्य की विधा कविता से ही हुआ । स्वतंत्रता पूर्व 'हीराडोम' की कविता 'अछूत की शिकायत' सरस्वती मासिक पत्रिका में सितम्बर 1914 के अंक में प्रकाशित हुई। इस कविता की भाषा भोजपुरी है। इस कविता को व्यापक हिन्दी स्तर पर चर्चित करने का श्रेय डॉ. रामविलास शर्मा को है। "1977 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण' में डॉ. राम विलास शर्मा ने इस कविता को उद्धृत किया। उसके बाद ही इसकी ओर लोगों का ध्यान गया ।"[5] दलित साहित्य के दूसरे महत्वपूर्ण कवि 'अछूतानन्द हरिहर' है जिन्होंने दलित जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। दलित साहित्य की मूल प्रेरणा न मार्क्सवाद है न हिन्दूवाद यह तो पूर्ण रूप से अम्बेडकरवादीहैं।कई दलित साहित्यकार दलित साहित्य का

उदभव 1960 व 1970 के दशक को मानते है । सन् 1970 के दशक में दलित साहित्य की दुनिया को कई रत्न दिये। और दलित साहित्य का स्वरूप कविता, कहानी, आत्मकथा, उपन्यास आलोचना आदि कई विधाओं के माध्यम से प्रकट हुआ। ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिसराय, श्यौराज सिंह बेचैन, जयप्रकाश कर्दम, माताप्रसाद, तुलसीराम, सूरजपाल चौहाण, डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, कुसुम वियोगी आदि दलित सहित्यकारों ने अपने लेखन से दलित साहित्य को संवर्धित किया। दलित साहित्यकारों नेआत्मकथा विधा के माध्यम से अपने वास्तविक जीवन का भोगा हुआ यथार्थ समाज के समक्ष प्रस्तुत किया। इन "आत्मकथाओं पर निरंतर सवाल उठ रहे है इन आत्मकथनों को लिखकर दलित अपनी अस्मत जारी क्यों कर रहे है? कुछ लोग इनकी भाषाओं पर भी आरोप लगाते है। इस विवाद में केवल गैर दलित ही नहीं बल्कि दलित लेखक भी शामिल है।"[6] दलित साहित्यकारों ने आत्मकथा लेखन से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। भाषा, कथ्य, संवेदना का आरोप भी दलित साहित्य पर लगाया जाता है जिसका समय-समय पर दलित साहित्यकारों ने समुचित उत्तर दिया है। दलित साहित्य का दायरा विस्तृत है जिसके अन्तर्गत सवर्ण शोषित समाज भी शामिल है।

निष्कर्ष :- हिन्दी साहित्य में 20वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में दलित साहित्य के विकास का अपना महत्वपूर्ण स्थान हैं। दलित साहित्य के आरम्भ का श्रेय मराठी दलित साहित्य को है परन्तु दलित साहित्य के राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति हिन्दी साहित्य के माध्यम से प्राप्त हुई है। आज दलित साहित्य हिन्दी के अतिरिक्त तेलगु, कन्नड़, पंजाबी आदि विविध भाषाओं में लिखा जा रहा है जो दलित साहित्य के निरन्तर विकास को दर्शाता है। दलित साहित्य से दलितों की आस्मिता जागृत हो रही है उनमें आत्मविश्वास का निर्माण हुआ है। हिन्दी दलित साहित्य मानवीय भेद को दूर कर उनमें मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करने में सहायक सिद्ध हुआ ।

----------00--------

संदर्भ-सूची :-

1. डॉ. एन. सिंह, दलित साहित्य के प्रतिमान, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली पृष्ठ सं.- 53
2. वही पृष्ठ 53
3. डॉ. सादिक तांबोली, हिन्दी मराठी दलित साहित्य एक अध्ययन, विनय प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ सं. - 14
4. माता प्रसाद, हिन्दी काव्य में दलित कावयधारा, पृष्ठ संख्या - 47
5. कविता के सौ बरस संपादक- लीलाधर मंडलोई, शिल्पयान, दिल्ली संस्करण 2013, पृष्ठ संख्या - 43
6. डॉ. महेन्द्र कुमार एल. वणकर, हिन्दी दलित साहित्य में ओमप्रकाश वाल्मीकि का प्रदान, अमन प्रकाशन, कानपुर पृष्ठ संख्या -99

----------00--------